अथ गुडूची । तस्या उत्पत्ति नामानि गुणाँश्चाह

अथ लङ्केश्वरो मानी रावणो राक्षसाधिपः रामपत्नीं बलात्सीतां जहार मदनातुरः ॥ १ ॥
ततस्तं बलवान् रामो रिपुं जायाऽपहारिणम् । वृतो वानरसैन्येन जघान रणमूर्धनि ॥ २ ॥
हते तस्मिन्सुरारातौ रावणे बलगर्विते । देवराजः सहस्राक्षः परितुष्टश्च राघवे ॥ ३ ॥
तत्र ये वानराः केचिद्राक्षसैर्निहता रणे । तानिन्द्रो जीवयामास संसिच्यामृतवृष्टिभिः ॥ ४ ॥
ततो येषु प्रदेशेषु कपिगात्रात्परिच्युताः । पीयूषबिन्दवः पेतुस्तेभ्यो जाता गुडूचिका ॥ ५ ॥
गुडूची मधुपर्णी स्यादमृताऽमृतवल्लरी । छिन्ना छिन्नरुहा छिन्नोद्भवा वत्सादनीति च ॥ ६ ॥
जीवन्ती तन्त्रिका सोमा सोमवल्ली च कुण्डली । चक्रलक्षणिका धीरा विशल्या च रसायनी ॥
चन्द्रहासा वयस्था च मण्डली देवनिर्मिता । गुडूची कटुका तिक्ता स्वादुपाका रसायनी ॥८॥
संग्राहिणी कषायोष्णा लघ्वी बल्याऽग्निदीपिनी । दोषत्रयामतृड्दाहमेहकासांश्च पाण्डुताम् ॥
कामलाकुष्ठवातास्रज्वरक्रिमिवमीन्हरेत् । (प्रमेहश्वासकासार्शः कृच्छ्रहृद्रोगवातनुत्) ॥१०॥

अब यहां से गुडूच्यादिवर्ग आरम्भ होता है । उसमें प्रथम 'गिलोय' की उत्पत्ति, नाम तथा गुण कहते हैं ।

उत्पत्ति—जब कि अभिमानी, लङ्का के राजा, राक्षसों के स्वामी रावण ने कामातुर हो श्रीरामचन्द्रजी की पत्नी श्रीसीताजी को बलपूर्वक हरण किया, तब बलवान् श्रीरामचन्द्रजी ने स्त्री के हरण करनेवाले उस शत्रु (रावण) को वानरों की सेनाओं से युक्त हो युद्ध में मारा । बल से गर्वीले, देवताओं के शत्रु उस रावण के मारे जाने पर हजार नेत्रों वाले देवताओं के राजा इन्द्र, श्रीरामचन्द्रजी पर अत्यन्त प्रसन्न हुये और उन्होंने उस युद्ध में जो कोई वानर राक्षसों के द्वारा मारे गये थे उन्हें अमृत की वर्षा से सींचकर जिला दिया । उसके बाद जिन स्थानों पर वानरों के शरीर से अमृत की बूँदे पृथ्वी पर गिरीं, उनसे 'गिलोय' की उत्पत्ति हुई ।

नाम—गुडूची, मधुपर्णी, अमृता, अमृतवल्लरी, छिन्ना, छिन्नरुहा, छिन्नोद्भवा, वत्सादनी, जीवन्ती, तन्त्रिका, सोमा, सोमवल्ली, कुण्डली, चक्रलक्षणिका, धीरा, विशल्या, रसायनी, चन्द्रहासा, वयस्था, मण्डली और देवनिर्मिता ये सब संस्कृत नाम 'गिलोय' के हैं ।

गुण—गिलोय कटु, तिक्त तथा कषाय रस युक्त एवं विपाक में मधुर रसयुक्त, रसायन, संग्राही, उष्णवीर्य, लघु, बलकारक, अग्निदीपक तथा त्रिदोष, आम, तृषा, दाह, मेह, कास, पाण्डुरोग, कामला, कुष्ठ, वातरक्त, ज्वर, क्रिमि और वमि को दूर करती है । (यह प्रमेह, श्वास, कास, अर्श, मूत्रकृच्छ्र, हृद्रोग और वात इन सबों का नाश करने वाली होती है) ॥ १–१० ॥

इसके पत्तों के गुण आगे शाकवर्ग में लिख हुवे हैं ।

१ गिलोय

हि०–गिलोय, गुरुच, गुडुच । बं०–गुलंच, पालो (सत्व) । म०–गुलवेल, गरुड़ वेल । गु०–गलो । क०–अमरदवल्ली, अमृत वल्ली । ते०–तिप्पतीगे । ता०–शिन्दिलकोडि, अमृडवल्ली । उ०–गुलंचा । पं०–गिलो । क०–गरुड़वेल । मला०–अम्रितु । गोआ०–अमृतवेल । फा०–गिलोई,

गिलोय। अ०-गिलोइ। अं०-टिनोस्पोरा (Tinospora)। ले०-*Tinospora cordifolia (Willd.) Miers* (टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिया मायर्स)। Fam. Menispermaceae (मेनिस्पर्मेसी)।

गिलोय—प्रायः सब प्रान्तों के जंगल झाड़ियों में पाई जाती है विशेष कर गरम प्रान्तों में अधिक होती है। देहरादून और सहारनपुर के जङ्गलों में बहुत पायी जाती है।

इसकी बहुवर्षायु, चिकनी एवं मांसल लता-बहुत विस्तार में वृक्षों पर फैल जाती है। शाखाओं से डोरे के समान शोरियाँ निकल कर भूमि की ओर लटकती हैं। पत्ते-पान के समान, २-४ इञ्च के घेरे में गोलाकार नुकीले, चिकने, पतले, ७-९ शिराओं से युक्त एवं १-३ इञ्च लंबे पर्णवृन्त से युक्त होते हैं। प्रायः वसन्त ऋतु में इसके पुराने पत्ते पीले होकर गिर जाते हैं और ज्येष्ठ तक नवीन पत्ते निकल आते हैं। उसी समय हरापन युक्त पीले रंग के अथवा केवल पीले रंग के फूलों के गुच्छे आते हैं। फल-मटर के समान होते हैं और पकने पर ये लाल हो जाते हैं। बीज-कुछ टेढ़े तथा चिकने होते हैं।

इसके मूल तथा कांड का व्यवहार औषध के लिये किया जाता है। ताजी अवस्था में कांड की छाल हरी तथा मांसल रहती है तथा उस पर पतली भूरे रंग की बाह्य त्वचा रहती है जिसकी पपड़ी निकलती रहती है। इस पर छोटे-छोटे गठ्ठे होते हैं। इसको काटने से अन्दर का भाग चक्राकार दिखाई देता है। ताजी एवं हरी गुडुच ज्यादा लाभप्रद होती है। गरमी में मई महीने के आखिर में इसका संग्रह करना चाहिये। प्रयोग के पूर्व इसके ऊपर की छाल खुरचकर निकाल दी जाती है। इसमें गन्ध नहीं होती किन्तु स्वाद कड़वा होता है।

इससे कुछ भिन्न इसकी एक दूसरी जाति प्रायः बड़ी (४"-९" × ८"), मृदु रोमश और प्रायः त्रिखण्ड पत्तियों वाली होती है। इसके बीज के कठोर आवरण पर छोटे-छोटे दाने होते हैं। इसे सं०-पद्मगुडूची, बं०-पद्मगुलंच, माल०, पं०-बड़ी सरसटीलत एवं ले०-Tinospora malabarica (Lam.) Miers (टिनोस्पोरा मलबारिका मायर्स) कहते हैं। दोनों के गुण और स्वरूप में स्थूलरूप से कोई अन्तर न मिलने के कारण दोनों का ही व्यवहार गुडूची के नाम से किया जाता है। इसे कुछ विद्वानों ने सुदर्शन माना है।

रासायनिक संगठन—इसकी ताजी कांड त्वक् में तीन रवेदार पदार्थ, गिलोइन ग्लूकोसाइड (Giloin, C_{23} H_{32} O_{10}, $5H_2O$), गिलोइनिन नामक कड़वा पदार्थ (Giloinin, C_{17} H_{18} O_5) तथा गिलोस्टेरॉल (Gilosterol, C_{28} H_{48} O) पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें बर्बेरिन (Berberine) एवं मोम की तरह का एक पदार्थ पाया जाता है।

गुडूचीसत्व—अच्छी मोटी गुडुच बरसात के पूर्व संग्रहकर ऊपर की छाल छुड़ाकर साफ धोकर छोटे टुकड़े बना पत्थर के खरल में महीन कूट डाले। इसमें चौगुना जल डाल १२-२४ घंटा भींगने के बाद अच्छी तरह मसलकर कपड़े से छान ले। सत्व नीचे बैठने के बाद ऊपर का जल धीरे से निथार कर सत्व को सुखाकर बन्द बोतलों में रखें। कुछ लोग निथरे हुये जल में फिर से उसी गुडुच को मसल एवं उबाल कर छान लेते हैं तथा उस द्रव को पहले निकाले हुये सत्व में मिलाकर धूप में सुखा लेते हैं जिससे इसमें उष्ण जल में घुलनशील पदार्थ भी आजाते हैं। कुछ लोग निथारे हुये जल को औटाकर स्वतन्त्र प्रयोग भी करते हैं।

गुण और प्रयोग—गुडुच कड़वी, उष्ण, त्रिदोषघ्न, रसायन, बल्य, ज्वरहर, दीपन, मूत्रजनन, त्वग्रोगहर, पित्तसारक तथा विषघ्न है। नवीन अनुसंधानों से गुडुची का व्याधिप्रतिकारक गुण व्यापक रूप में प्रमाणित हुआ है। जीर्ण पूतिकेन्द्र (Chronic septic focus) जनित विकार,

जीर्ण विषमज्वर तथा यकृत् की हीनकार्यता आदि में कुछ काल तक गुडूची का प्रयोग करते रहने से अवश्य लाभ होता है।

इसका प्रयोग त्वग्रोग, विषमज्वर, जीर्णज्वर, कुष्ठ, वातरक्त, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, कामला, पांडु, मन्दाग्नि, वमन, तृषा, दाह, रक्तार्श एवं कृमि आदि अनेक रोगों में किया जाता है।

(१) ताजी गिलोय को साफ धोकर बनाया कल्क १० तो० एवं अनन्तमूल का चूर्ण १० तो० इनको १०० तो० उबलते जल में बन्द पात्र में दो घंटे बन्द रखें। फिर मसल कर छान लें। यह फांट उत्तम रसायन एवं मूत्रजनन है। कुष्ठ, फिरङ्गोपदंश की द्वितीयावस्था, वातरक्त तथा जीर्ण आमवात में यह बहुत लाभदायक होता है। ज्वर के पश्चात् उत्पन्न दौर्बल्य तथा अन्य दौर्बल्य युक्त व्याधियों में इसका उपयोग पौष्टिक रूप में किया जाता है। इसको ५-१० तो० दिन में ३ बार पिलाते हैं।

(२) सौम्य विषमज्वर तथा जीर्णज्वर में जो शीत मालूम पड़ता है वह इसके क्वाथ से दूर होता है। जीर्णज्वर में इसके क्वाथ में या स्वरस में छोटी पीपल एवं मधु मिलाकर पिलाते हैं जिससे ज्वर, कफ, प्लीहावृद्धि एवं अरुचि आदि दूर होती है।

(३) प्रमेह, नवीन सोजाक तथा अन्य मूत्रविकारों में इसका स्वरस अधिक मात्रा में दिया जाता है। अधिक मात्रा से पाखाना भी साफ होता है। प्रमेह में २-३ ड्रा० स्वरस पाषाणभेद-चूर्ण ५-८ र० एवं मधु के साथ या दुग्ध एवं शर्करा के साथ दिन में ३ बार पिलाते हैं। गुडुच, हरिद्रा एवं आंवला इनका क्वाथ अथवा गुडुची स्वरस एवं मधु का प्रयोग भी लाभदायक होता है।

(४) गुडूची से पित्तमार्ग का अभिष्यन्द कम होने के कारण पित्त का स्राव ठीक होने लगता है। कुपचन, मन्द उदरशूल तथा कामला में इसका उपयोग किया जाता है। कामला में इसका स्वरस मधु मिलाकर सुबह पिलाना चाहिये। इसमें गुडुच के पत्तों का कल्क तक्र के साथ लाभदायक होता है। पैत्तिक वमन में इसका स्वरस पिलाने से लाभ होता है।

(५) त्वग्रोगों में यह प्रधान औषध है। इनमें एक हाथ प्रमाण में गुडुच, गुग्गुलु के साथ या कडवी नीम या हरिद्रा, खदिर एवं आंवला के साथ देते हैं। इससे कंडू, दाह, दाग एवं चकत्ते आदि अच्छे होते हैं। वातरक्त में दुग्ध के साथ सिद्ध किया हुआ इसका तैल लाभदायक माना जाता है। पित्ताधिक्य युक्त वातरक्त में इसका क्वाथ पिलाते हैं।

(६) अर्श में इसका स्वरस या चूर्ण तक्र के अनुपान से देते हैं।

(७) स्तन्यशुद्धि के लिये इसका क्वाथ पिलाया जाता है।

(८) रसायन रूप में इसका स्वरस या मधु एवं गुड के साथ इसके चूर्ण का प्रयोग किया जाता है।

(९) **गुडूचीसत्त्व**—ज्वरहर रूप में इसका बहुत उपयोग किया जाने से इसे भारतीय किनीन कहा जाता है। प्लीहावृद्धि एवं बस्तिशोथ में यह बहुत उपयोगी है। आंव, जीर्ण अतिसार, रक्तातिसार, अम्लपित्त, मूत्रविकार एवं शुक्रक्षय में यह लाभदायक है। औषधीय गुणों के अतिरिक्त यह उत्तम पोषक पदार्थ भी है।

मात्रा—चूर्ण १-३ मा०, क्वाथ ४-८ तो०; सत्त्व ५-१५ र०।

३४२. गुडूची

परिचय

गण—वयःस्थापन, दाहप्रशमन, तृष्णानिग्रहण स्तन्यशोधन, तृप्तिघ्न (च०); गुडूच्यादि, पटोलादि, आरग्वधादि, काकोल्यादि, वल्लीपञ्चमूल (सु०)।

कुल—गुडूची-कुल (मेनिस्पर्मेसी-Menispermaceae)।

नाम—लै०-टिनोस्पोरा कॉर्डिफोलिया (Tinospora cordifolia (Willd) Miers ex Hook. f. & Thoms.); सं०-गुडूची, मधुपर्णी, अमृता, छिन्नरुहा, वत्सादनी, तन्त्रिका, कुण्डलिनी, चक्रलक्षणिका; हि०-गिलोय, गुडिच; बं०-गुलञ्च; म०-गुलवेल; गु०-गलो; ता०-शिण्डिलकोडि; ते०-टिप्पाटिगो; अ०-गुलञ्च ।

स्वरूप—यह एक बहुवर्षायु[1] झाड़ीदार **लता** है जो नीम, आम आदि वृक्षों पर कुण्डलाकार चढ़ती है। काण्ड मांसल होता है तथा शाखाओं से अनेक मांसल सूत्रवत् वातःशन मूल निकल कर नीचे की ओर झूलते रहते हैं। **त्वचा**-ऊपर की धूसरवर्ण, या पीताभ श्वेत, बहुत पतली होती है जिसे हटाने पर नीचे हरित-मांसल भाग दिखाई पड़ता है। पत्र-हृदयाकार, एकान्तर, जालीदार और स्निग्ध होते हैं। **पुंपुष्प**-छोटे, पीतवर्ण या हरिताभ पीत, अक्षीय या अन्त्य मंजरियों में पौधे की पत्तियाँ झड़ने पर निकलते हैं। पुंपुष्प-गुच्छों में होते हैं। **स्त्रीपुष्प**-प्रायः एकल होते हैं। **फल**-मटर के समान या अंडाकार, चिकने, मांसल होते हैं जो पकने पर लाल हो जाते हैं। बीज मुड़े होते हैं। वर्षा ऋतु में पुष्प तथा शीतकाल में फल लगते हैं।

जाति—इसकी एक जाति 'पद्मगुडूची' या 'कन्दगुडूची' कहलाती है। इसके पत्र बड़े तथा त्रिकोण या त्रिखण्ड होते हैं। यह T. sinensis (Lour.) Merrill है। एक अन्य प्रजाति T. crispa (Linn.) Miers ex. Hook f. & Thoms. आसाम में होती है। इसके काण्ड में जगह-जगह उत्सेध होते हैं। यह तीव्र ज्वरघ्न होता है।

उत्पत्तिस्थान—यह भारत में सर्वत्र १००० फीट की ऊँचाई तक होता है।

रासायनिक संघटन—इसमें बर्बेरिन (Berberine) आदि क्षाराभ, तिक्त ग्लुकोसाइड गिलोइन (Giloin), एक उड़नशील तैल तथा वसाम्ल पाये जाते हैं। इसके काण्ड से एक स्टार्च (गुडूचीसत्त्व) निकलता है (ताजे से ०·४८ तथा सूखे से १·२ %)।

---

१. 'ततो येषु प्रदेशेषु कपिगात्रात् परिच्युताः।
पीयूषबिन्दवः पेतुस्तेभ्यो जाता गुडूचिका ॥' (भा. प्र.)
बहुवर्षायु तथा अमृततुल्य गुणकारी (रसायन) होने से इसका नाम 'अमृता' है।

गुण

गुण—गुरु, स्निग्ध
विपाक—मधुर
रस—तिक्त, कषाय
वीर्य—उष्ण

कर्म

दोषकर्म—यह त्रिदोषशामक है। स्निग्ध-उष्ण होने से वात, तिक्त-कषाय होने से कफ और पित्त का शमन करता है।

संस्थानिक कर्म-बाह्य—यह कुष्ठघ्न और वेदनास्थापन है।

आभ्यन्तर-पाचनसंस्थान—यह तृष्णानिग्रहण, छर्दिनिग्रहण, दीपन, पाचन, पित्तसारक, अनुलोमन और कृमिघ्न है। आमाशयगत अम्लता इससे कम होती है।

रक्तवहसंस्थान—यह हृद्य, रक्तशोधक एवं रक्तवर्धक है।

श्वसनसंस्थान—कफघ्न है।

प्रजननसंस्थान—वृष्य है।

मूत्रवहसंस्थान—यह प्रमेहहर है।

त्वचा—कुष्ठघ्न है।

तापक्रम—ज्वरघ्न तथा दाहप्रशमन है।

सात्मीकरण—रसायन है।

प्रयोग

दोषप्रयोग—यह त्रिदोषज विकारों में प्रयुक्त होता है। घृत के साथ वात, शर्करा के साथ पित्त तथा मधु के साथ कफ के विकारों में दिया जाता है।[1]

संस्थानिक प्रयोग-बाह्य—कुष्ठ, वातरक्त आदि में गुडूची से सिद्ध तैल लगाते हैं।

आभ्यन्तर-पाचनसंस्थान—तृष्णा, छर्दि, अग्निमांद्य, शूल, यकृद्विकार, कामला, अम्लपित्त, प्रवाहिका, ग्रहणी तथा कृमि में प्रयुक्त होता है।

रक्तवहसंस्थान—हृद्दौर्बल्य, रक्तविकार (वातरक्त, आमवात आदि) तथा पाण्डु में प्रयुक्त होता है।

श्वसनसंस्थान—कास में उपयोगी है।

प्रजननसंस्थान—शुक्रदौर्बल्य में देते हैं।

मूत्रवहसंस्थान—प्रमेह विशेषतः मधुमेह में इसका प्रयोग करते हैं।

त्वचा—कुष्ठ, विसर्प आदि चर्मरोगों में दिया जाता है। फिरंग की द्वितीयावस्था में जब विकार त्वचा में अधिष्ठित होता है तब इसका प्रयोग करते हैं।

---

१. **'घृतेन वातं सगुडा विबन्धं पित्तं सिताढ्या मधुना कफं च।**
वातास्रमुग्रं रुबुतैलमिश्रा शुण्ठ्यामवातं शमयेद् गुडूची॥' (ध. नि.)

तापक्रम—जीर्णज्वर तथा विषमज्वर में गुडूची-स्वरस देते है। इससे ज्वर दाह शान्त होते हैं, अग्नि बढ़ती है तथा दौर्बल्य दूर होता है।

सात्मीकरण—दौर्बल्य, क्षय में तथा रसायनकर्म में प्रयोग होता है।

प्रयोज्य अंग—काण्ड।

मात्रा—क्वाथ ५०-१०० मि० लि०; चूर्ण ३-६ ग्रा०, सत्त्व १-२ ग्रा०।

विशिष्ट योग—गुडूच्यादि चूर्ण, गुडूच्यादि क्वाथ, गुडूचीलौह, अमृतारिष्ट, गुडूचीतैल।

वक्तव्य—यथासंभव ताजी गुडूची का ही प्रयोग करना चाहिए। संग्रह करना हो तो वर्षा के पूर्व उसे छाया में सुखा कर रखना चाहिए।

× × ×

'गुडूची कटुका तिक्ता स्वादुपाका रसायनी। संग्राहिणी कषायोष्णा लघ्वी बल्याग्निदीपनी॥
दोषत्रयामतृड्दाहमेहकासांश्च पाण्डुताम्। कामलाकुष्ठवातास्रज्वरकृमिवमीर्हरेत्।'
(भा. प्र.)

'अमृता सांग्राहिक-वातहर-दीपनीय-श्लेष्मशोणितविबन्धप्रशमनानाम्।' (च.सू.२५)

'ज्ञेया गुडूची गुरुरुष्णवीर्या तिक्ता कषाया ज्वरनाशिनी च।
दाहास्तितृष्णावमिरक्तवातप्रमेहपाण्डुभ्रमहारिणी च॥' (रा. नि.)

'कन्दोद्भवा गुडूची च कटूष्णा संनिपातहा। विषघ्नी ज्वरभूतघ्नी बलीपलितनाशिनी॥'
(ध. नि.)

अमृतायाः शतं चूर्णं वाससा परिशोधितम्। पृथक् षोडशभागाः स्युः गुडमाक्षिकसर्पिषाम्॥
यथाग्नि भक्षयेदेतज्ज्वरी हितमिताशनः। नास्य कश्चिद् भवेद् व्याधिः न जरा पलितं न च॥'
(भा. प्र.)

विविध भाषाओं में नाम–

सं.– गुडूची, मधुपर्णी, अमृता, अमृतवल्लरी, छिन्नरुहा, छिन्नोद्भवा, वत्सादिनी, जीवन्ति, तन्त्रिका, सोम, कुण्डली, चक्रलक्षणिका, धारा, चन्द्रहासा। हि.– गुरच, गुडुच, गिलोय, जुडवेल, गुलवेलू, गिलोई। बं.– गुलच, गुरच, गिलो। म.– गरुडवेल, गरोल। गु.– गुलो, गुलवेल। क.– अमरहवल्ली, अमृतवल्ली। ते.– तिप्पतोगे, तिथातिडे, गोमुची। ता.– सिन्दिल कोदि, तिप्पतिमा। उ.– गिरुलि। द्रा.– सीदल, कुढि। म.– गुलवेला। फा.– गिई, गिलोय। अं.– गिलादे। ले.– Tinospora Cordifolia (टिनोस्पारा कार्डिफोलिया)।

वल्ली गुडूची की अन्वर्थ ज्ञापिका संज्ञा– छिन्नरुहा, वत्सादिनी, ज्वरनाशिनी। **कन्दोद्भव गुडूची की अन्वर्थ संज्ञा**– पिण्डामृता, कन्दरोहिणी, रसायनी।

गुण-दोष–

धन्वन्तरि निघण्टु के अनुसार– गुडूची तिक्त रस वाली, कषाय रसयुक्त, उष्ण वीर्य तथा गुरु है। यह त्रिदोष (वात, पित्त, कफ) विकार, क्रिमि रोग, रक्तार्श, कुष्ठरोग तथा ज्वर को अच्छी तरह दूर करने वाली है। गुडूची आयु को देने वाली, मेधावर्द्धक, तिक्त रस प्रधान तथा ग्राही है। यह ज्वर, प्यास, पाण्डु रोग, वात-रक्त विकार, वमन, प्रमेह तथा त्रिदोष का नाश करने वाली है। गुडूची कफ एवं वात को नष्ट करने वाली है, पित्त विकारादि रोग सुखाने वाली है, रक्त वात शान्त करने वाली है, कण्डू रोग तथा विसर्प का नाश करने वाली है। कन्दोद्भव कटु रस प्रधान तथा उष्ण है और सन्निपात को दूर करती है। यह विष नाशक है, ज्वर तथा भूत विकार

को दूर करने वाली है तथा वलि (मुख में झुर्री पड़ना) पलित (असमय में बाल पकना) को नष्ट करती है और भी कहा गया है कि गुडूची घृत के साथ सेवन करने से वात रोग को नष्ट करती है, गुड़ के साथ सेवन करने से विबन्ध को नष्ट करती है, मिश्री के साथ सेवन करने से पित को शान्त करती है और मधु के साथ सेवन करने से कफ का नाश करती है; ऐरण्ड तैल के साथ सेवन करने से भयंकर वात रक्त को दूर करती है। गुडूची सोंठ के साथ सेवन करने से आम वात को शान्त करती है।

राजनिघण्टु के अनुसार- गुडूची गुरु, उष्ण वीर्य, तिक्त तथा कषाय रस प्रधान है और यह ज्वर का नाश करती है। इनके अतिरिक्त यह दाह, पीड़ा, प्यास, वमन, रक्त, वात, प्रमेह, पाण्डुरोग तथा भ्रम को दूर करती है।

भावप्रकाश के अनुसार- गुडूची कटु तथा तिक्त रस प्रधान, स्वाद में मधुर, रसायन तथा ग्राही है; कषाय रस वाली, उष्ण, हल्की, बल कारक तथा जाठराग्नि दीपक है। यह तीनों दोष, आम विकार, प्यास, दाह, प्रमेह, कास, पाण्डुरोग, कामला रोग, कुष्ठ रोग, वात रक्त, ज्वर, क्रिमि रोग, वमन को दूर करती है; इनके अतिरिक्त प्रमेह, श्वास रोग, कास, अर्शरोग, मूत्रकृच्छ्र, हृदय रोग तथा वात रोग को दूर करती है।

राजवल्लभ के अनुसार- गुडूची, ग्राही, बलकारक, त्रिदोष नाशक, रसायन, जाठराग्नि दीपक तथा ज्वर, प्यास, वमन, कामला रोग एवं वात-पित्त विकार को दूर करती है।

वैद्यक शास्त्र में गुडूची का प्रयोग-

(१) रसायन में गुडूची का प्रयोग- रसायन कार्य के लिए गुडूची का प्रयोग करे। (च.चि.अ.१)। (२) **विषमज्वर में गुडूची का प्रयोग**- विषम ज्वर में गुडूची के रस का प्रयोग करे। (च.चि.अ.३)। (३) **कामला में गुडूची का प्रयोग**- कामला रोग से पीड़ित व्यक्ति शीतल गुडूची का रस मधु मिलाकर प्रातः काल पान करे। (च.चि.अ.२०)। (४) **पित्तज वमन में गुडूची का प्रयोग**- पित्तज छर्दि में गुडूची या गुडूची जल प्रयोग करे। (च.चि.अ.२३)। (५) **वात रक्त में गुडूची का प्रयोग**- गुडूची का रस तथा दूध के साथ विधिवत सिद्ध तैल वात रक्त को दूर करती है। (च.चि.अ.२९)। (६) **स्तन्य शुद्धि के लिए गुडूची का प्रयोग**- गुडूची तथा छतिवन की छाल का कषाय सोंठ का चूर्ण मिलाकर प्रयोग करे। (च.चि.अ.३०)।

(१) पित्त प्रधान प्रबल वात रक्त में गुडूची का प्रयोग- प्रबल पित्तजन्य वात रक्त में गुडूची के कषाय का प्रयोग करे। (सु.चि.अ.५)। (२) **अर्श रोग में गुडूची का प्रयोग**- अर्श रोग में गुडूची के साथ तक्रका प्रयोग करे। (सु.चि.अ.६)। (३) **वात ज्वर में गुडूची का प्रयोग**- गुडूची का क्वाथ वात ज्वर में पान करे। (सु.चि. अ.३९)।

प्रमेह में गुडूची का प्रयोग- प्रमेह में शहद मिलाकर गुडूची के रस का प्रयोग करे। (वाग्भट)

(१) बलाधान के लिए गुडूची का प्रयोग- अमृता (गुडूची) का चूर्ण बनाकर वस्त्र से छान ले और उसमें सोरह भाग गुड़, घृत तथा शहद मिलाकर अग्नि बल के अनुसार भक्षण करे और हितकर पौष्टिक भोजन करे। इसके सेवन करने से कोई रोग नहीं होता है और जरा तथा पलित रोग नहीं होता है। (भा.प्र.म.ख.१म;भा.)। (२) **जीर्ण ज्वर में गुडूची का प्रयोग**- गुडूची के क्वाथ में पीपर का चूर्ण तथा मधु मिलाकर सेवन करने से जीर्ण ज्वर तथा कफ नष्ट होता है। (भा.प्र.ज्वर चि.)। (३) **कामला रोग में गुडूची के पत्ते का प्रयोग**- गुडूची के पत्ते का कल्क कामला रोग से पीड़ित व्यक्ति मट्ठा के साथ पान करे। (भा. कामला चि.)।

(१) आमवात में गुडूची का प्रयोग- गुडूची का सोंठ के साथ आम वात में सेवन करे। (चक्र. आमवात

चि.)। (२) **ज्वर रोग के लिए गुडूची का प्रयोग-** ज्वर से पीड़ित रोगी के लिए गुडूची के पत्ते के शाक का प्रयोग करे। (चक्र.ज्वर चि.)। (३) **श्लीपद में गुडूची का प्रयोग-** तैल मिलाकर गुडूची के स्वरस का नित्य सेवन करने से श्लीपद रोग (फीलपाव) नष्ट होता है। (चक्र.श्लीपद चि.)। (४) **कुष्ठ रोग में गुडूची का प्रयोग-** गुडूची का स्वरस अपने अग्नि बल के अनुसार सेवन करने से तथा जीर्ण हो जाने पर घृत के साथ थोड़ा यूष तथा भात खाय। अत्यन्त दुर्गन्धित शरीर भी दिव्य रूप हो जाता है। (चक्र.कुष्ठ.चि.)।

(१) **तीन प्रकार के वमन में गुडूची का प्रयोग-** गुडूची का विधिवत् हिम कषाय बना कर तीनों प्रकार के वमन में पथ्य पूर्वक शहद के साथ पान करे। (वङ्गसेन, छर्दि चि.)। (२) **वायु के हृदय में स्थित होने पर गुडूची का प्रयोग-** हृदयस्थ वात की शान्ति के लिए गुडूची का मरिच का चूर्ण मिलाकर प्रातःकाल प्रयत्न पूर्वक जल से सेवन करे। (वङ्गसेन, वात चि.)।

... starchy extract, bitter principle and a trace of